भारतीय संस्कृति और पर्यावरण

डा0 शिप्रा वर्मा,
असिस्टेंट प्रोफेसर (हिन्दी),
डा0 बी0 आर0 अम्बेड़कर राजकीय महाविद्यालय,
अनौंगी, कन्नौज

साराशं

मानव सदैव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष, मूर्त या अमूर्त रूप में प्रकृति से जुड़ा हुआ है। मनुष्य एवं प्रकृति के इस संबंध को भारतीय ऋषियों–मुनियों ने गहराई से समझा था इसीलिये वेद, पूराणों तें भी प्रकृति की महत्ता को गहराई से समझा गसा है। पर्यावरण चिंतन की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है जितनी भारतीय संस्कृति। इसालिये भारतीय संस्कृति के माध्यम से पर्यावरण के महत्व एवं संवर्द्वन को समझा जा सकता है। पर्यावरण ने जीवन को सामर्थ्यपूर्ण बनाने में अपना अमूल्य योगदान दिया है।

भारतीय चिंतन में पर्यावरण की अवधारणा उतनी ही प्राचीन है जितना मानव का अस्तित्व। भारतीय संस्कृति की एक प्रमुख विशेषता आध्यात्म भाव है। ऋषि–मुनियों ने उस सत्ता काक प्रत्येक प्राणी में स्वीकार किया है। 'तेत्तिरीयोपनिषद' में कहा गया है–

य तो वाइमानि भूतानि जायन्ते
ये न जातानि जीवन्ति
यत्प्रयत्यभि संशन्ति
तद् विजिज्ञासह व तद् ब्रहमेति।

भारतीय संस्कृति में प्रकृति को माता की संज्ञा दी गयी है। प्राकृतिक उपादनों नदी, वृक्ष, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, आकाश–पाताल, भूमि, जल, वायू, अग्नि, सूर्य, चन्द्र, गृह सभी की पूजा–अर्चना का विधान एवं मान्यता हमारी भारतीय संस्कृति में है। वैदिक काल को अरण्य संस्कृति का स्वर्णकाल कहा जाता है। वेदों में पर्यावरण से साम्य रखने वाले शब्द है–परिधि, परिभू, अभीवार, पर्यभवत, छन्दासि, आवृता आदि। ये ही संसार को जीवन शक्ति देकर उसे प्रभावित करते है। इन्हें पुरूरूपम नाम से भी संकेतित किया गया है–त्रीणि छन्दासि कवयो वि येतिरे, पुरूरूपं दर्शनं विश्ववचक्षणम् आपो वातो ओषधयः, तान्येकस्मिन् भुवन अर्पितानि। [1]

वैदिक मानव विभिन्न आयोजनों से पर्यावरण संरक्षण का कार्य करने पर ही 'जीवेमषरदः शतम्' जैसी अभिलाषा व्यक्त कर सका है। हमारी भारतीय संस्कृति यह मानती है कि मानव शरीर का निर्माण पांच तत्वों (क्षिति, जल, पावक, गगन, समीर) से मिलकर बना है यही पांच तत्व मानव जीवन पर शुभ–अशुभ प्रभाव भी डालते हैं। इन तत्वों की रक्षा करना हमारा परम दायित्व भी बन जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि हमारी वेदकालीन संस्कृति में स्थल मण्डल, जैव मण्डल एवंज ल मण्डल को संरक्षण प्राप्त था और इसे धार्मिक भावना माना गया ताकि लोग पर्यावरण संरक्षण की ओर अधिक प्रेरित हो सके।

आधुनिक समय में विज्ञान के द्वारा औद्योगिक जगत की खूब उन्नति हुई है और इसने पर्यावरण को बहुत परिवर्तित कर दिया है। महत्वांकांक्षी मानव ने अपने सृजन के द्वारा जीवन को अति सुविधा सम्पन्न बना लिया है लेकिन

पर्यावरण का जो विनाश इस सृजन से हुआ है वह एक बड़ा खतरा बनकर हमारे सामने खड़ा है। वर्तमान समय में भारतीय वैज्ञानिक 'जगदीश चन्द्र बसु' ने यह सिद्व किया कि वृक्षों में भी जीवन है। 'याज्ञवल्क्य' ऋषि के अनुसार

'' प्ररोहशखिनां शाखास्कन्धसर्वविदारणे।
उपजीव्यद्रुमाणाम् च विंशतेर्द्विगुणोदमः ।।
जैव्यरमशानसीमासु पुण्यस्थानसुरालये।
जातहुमाणां द्विगुणो दमो वृक्षे च विश्रुते।।
गुल्मगुच्छक्षुपलताप्रताननौषधीवीरूधाम्।
पूर्वस्मृतार्धदण्डश्चस्यानेवूमक्तेषु कर्तने।।

मातृ भूमि हमारे कल्याण की सभी चीजें प्रदान करती है यह मानव सहित सभी प्राणियों के रहने के लिये आश्रय प्रदान करती है। सर्वप्रथम जीव की उत्पति जल में तथा जल से हुई थी। अतः जल संरक्षण का अत्याधिक महत्व है। गंगा को मां माना गया है और वह पावन एवं पवित्र मानी जाती है। मनुस्मृति में मनु ने लिखा है '' किसी भी व्यक्ति को पानी में मल मूत्र अथवा थूकना नहीं चाहिए। किसी भी वस्तु को जो इन अपवित्र वस्तुओं, रक्त और विष से मिश्रित हो, जल में नहीं डालना चाहिये। [2]

वन्य संस्कृति को प्रायः नगर संस्कृति ने दूषित किया है। कालिदास ने इसका संकेत करते हुए 'अभिज्ञान शकुन्तलम् ' में इसका एक सजीव चित्र खीचा है। ''राजा दुष्यन्त के वनागमन के समय उनके रथ से उड़ने वाली धूल वृक्षों पर सूख रहे मुनिजनों के वस्त्रों को दूषित कर रही है। सेना के आगमन से घबराकर एक हाथी सहसा उस ओर निकल आया जिसके कारण अनेक वृक्ष लताये टूट गई हैं। हिरनों का समूह भ्रमवश भाग खड़ा हुआ है।[3] यह चित्रण वनों की शान्त जीवन शैली पर नगरों के दुष्प्रभाव को दिखाता है।

ध्वनि प्रदूषण के संबंध में भी हमारे प्राचीन ऋषियों में जागरूकता थी। वेदों में कहा गया है कि मनुष्य को आचरण की मर्यादा निर्धारित करके ही ध्वनि का प्रयोग करना चाहिये। व्यक्ति सुमधुर एवं कर्णप्रिय शब्दों का ही प्रयोग करे–

या भ्राता भ्रातर द्विक्षन्मा स्वासारमुतस्वसा।
सम्यंच सव्रता भूत्वा वाचं वदत भद्रया।। [4]

हम आधुनिक जीवन शैली को लेकर बेहद जागरूक है लेकिन पर्यावरण को क्षति पहुंचकर हम स्वयं के विनाश के मार्ग पर जा रहे हैं भारतीय संस्कृति पर्यावरण के प्रति अत्यंत संवेदनशील रही है ''अभिज्ञान शाकुन्तलम् के नांदी पाठ में अष्टमूर्ति शिव का स्मरण करते हुए प्रकृति के सभी तत्वों का समन्वित रूप से ध्यान किया गया है।''[5]

इनका परस्पर सामन्जस्य एवं संतुलन ही प्रकृति में शिव अर्थात कल्याण की प्रतिष्ठा करता है। अतः प्रकृति की रक्षा ही हमारा ध्येय होना चाहिए। हमारी वेदों की प्राचीन संस्कृति विरासत में हमें यह बताया गया है कि हिमालय की पुत्री पार्वती भूमि से उत्पन्न सीता (भूमिषा) और शकुंत पक्षियों द्वारा पालिता शकुन्तला है। ऋतुसंहार ग्रन्थ में भी ऋतु चक्र का मानव जीवन पर प्रभाव दर्शाया गया है। जायसी का बारहमासा भी प्रकृति का जीवन पर प्रभाव दर्शाता है।

जीव–जन्तुओं प्राकृतिक वातावरण में भी रहते हैं। प्रकृति के निकट सुरम्य वातावरण में भी उनका जीवन चलता है। वेदों में जीवों पर दया करना धर्म माना गया है। आदिकवि बाल्मिकि ने रामायण का प्रथम श्लोक की रचना ही क्रौच पक्षी की पीड़ा को देखकर की थी। बाल्मिकि ऋषि का शोक ही श्लोक में परिणित हो गया था–''हे व्याध! तूने यह जो प्रेमपाश में बंधे हुए क्रौच युगल में से एक का वध किया है इस अशोभनीय कृत्य के कारण तुझे कभी स्थायी प्रतिष्ठा नहीं मिलेगी।''[6]

मनुष्य अपने विकाश की यात्रा में कोई रूकावट नहीं चाहता और यह अति महत्वाकांक्षी

पर्यावरण को निरन्तर क्षति पहुचां रही है। अतीत की ओर देखने पर भी हमें यह ज्ञात होता है कि अनेक सभ्यतायें अपने चरम पर आने के बाद किस प्रकार समाप्त भी हो गयी। ''हड़प्पा संस्कृति के पतन का कारण शहरों में पृष्ठ प्रदेश में जमीन का बंजर हो जाना बतलाया जाता है।''[7] हम विनाश के मुहाने की तरफ बढ रहे हैं। जो पर्यावरण की संस्कृति हमें विरासत में मिली थी हमने उसे गवांया है। पर्यावरणीय संबंधी नियमों का उल्लंघन करने नर कानूनी रूप से सजा का प्रावधान भी है। हमें इस बारे में विचार अवश्य करना होगा कि प्रकृति का अति दोहन हमें कहां ले जायेगा। इग्लैण्ड के कवि लुई मैकनीस की कविता ''अजन्में शिशु की प्रार्थना'' की कुछ पंक्तियां मानवता के भविष्य की तरफ संकेत करती है–

अभी नहीं मै ले पाया हूं जन्म
सुनो, ओ सुनो शर्ते मेरी,
जिनके बिना न मैं इस धरती पर आउंगा।
मेरे लिये प्रबन्ध करो ताजे पानी का
जिसमें धुलकर मेरी आत्मा स्वच्छ बनेगी।
हरी घास जिस पर क्षण भर मैं स्वप्न देखूं।
लेकिन मुझमें भर दो इतनी ताकत जिससे मै
विद्रोह कर सकूं
उससे जो मेरी मानवता को काले पत्थर में बदल
रहा हो,
जो मुझे मशीन का पुर्जा बना रहा हो।
मुझको पूरा मौका दो
अपनी सार्थकता सिद्व कर सकूं,
वरना मेरा गला दबा दो
धरती पर लाने से पहले।''[8]

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण को जो स्थान एवं महत्व दिया गया है यदि हम विस्मृत करते जा रहे हैं जो इस सृष्टि के विनाश का कारण बन सकता है। यदि हम प्रकृति के प्रति संवेदनशील नहीं बनेंगे तो हमारी संस्कृति भी विनाश की ओर चली जायेगी। हमारे पूर्वज पर्यावरण संरक्षण के लिये अत्यन्त प्रयत्नशील थे। हमें भी सतत् जागरूक रहकर अपने पर्यावरण को सुरक्षित करने हेतु प्रयत्नशील होना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अथर्ववेद : 18–1–17
2. भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन के विविध आयाम : वीरेन्द्र सिंह यादव ; पृ0 142
3. वही पृ0 182
4. अथर्वेद संहिता (टीका) टीकाकार : पं0 श्रीराम शर्मा आचार्य
5. भारतीय संस्कृति में पर्यावरण चिंतन के विविध आयाम : वीरेन्द्र सिंह यादव ; पृ0 181
6. वही पृ0 180
7. पर्यावरण की संस्कृति : शुभू पटवा ; पृ0 28
8. वही पृ0 28

Copyright © 2016, Dr. Shipra Verma. This is an open access refereed article distributed under the creative common attribution license which permits unrestricted use, distribution and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited.